रामचरित्मानस

उत्तरकाण्ड

श्री रामजी का स्वागत, भरत मिलाप, सबका मिलनानन्द

दोहा :
*** आवत देखि लोग सब कृपासिंधु भगवान। नगर निकट प्रभु प्रेरेउ उतरेउ भूमि बिमान॥4 क॥
भावार्थ:-
कृपा सागर भगवान् श्री रामचंद्रजी ने सब लोगों को आते देखा, तो प्रभु ने विमान को नगर के समीप उतरने की प्रेरणा की। तब वह पृथ्वी पर उतरा॥4 (क)॥
*** उतरि कहेउ प्रभु पुष्पकहि तुम्ह कुबेर पहिं जाहु। प्रेरित राम चलेउ सो हरषु बिरहु अति ताहु ॥4 ख॥
भावार्थ:-
विमान से उतरकर प्रभु ने पुष्पक विमान से कहा कि तुम अब कुबेर के पास जाओ। श्री रामचंद्रजी की प्रेरणा से वह चला, उसे (अपने स्वामी के पास जाने का) हर्ष है और प्रभु श्री रामचंद्रजी से अलग होने का अत्यंत दुःख भी॥4 (ख)॥
चौपाई :
*** आए भरत संग सब लोगा। कृस तन श्रीरघुबीर बियोगा॥ बामदेव बसिष्ट मुनिनायक। देखे प्रभु महि धरि धनु सायक॥1॥
भावार्थ:-
भरतजी के साथ सब लोग आए। श्री रघुवीर के वियोग से सबके शरीर दुबले हो रहे हैं। प्रभु ने वामदेव, वशिष्ठ आदि मुनिश्रेष्ठों को देखा, तो उन्होंने धनुष-बाण पृथ्वी पर रखकर-॥1॥
*** धाइ धरे गुर चरन सरोरुह। अनुज सहित अति पुलक तनोरुह॥ भेंटि कुसल बूझी मुनिराया। हमरें कुसल तुम्हारिहिं दाया॥2॥
भावार्थ:-
छोटे भाई लक्ष्मणजी सहित दौड़कर गुरुजी के चरणकमल पकड़ लिए, उनके रोम-रोम अत्यंत पुलकित हो रहे हैं। मुनिराज वशिष्ठजी ने (उठाकर) उन्हें गले लगाकर कुशल पूछी। (प्रभु ने कहा-) आप ही की दया में हमारी कुशल है॥2॥
*** सकल द्विजन्ह मिलि नायउ माथा। धर्म धुरंधर रघुकुलनाथा॥ गहे भरत पुनि प्रभु पद

पंकज। नमत जिन्हहि सुर मुनि संकर अज॥3॥
भावार्थ:-
धर्म की धुरी धारण करने वाले रघुकुल के स्वामी श्री रामजी ने सब ब्राह्मणों से मिलकर उन्हें मस्तक नवाया। फिर भरतजी ने प्रभु के वे चरणकमल पकड़े जिन्हें देवता, मुनि, शंकरजी और ब्रह्माजी (भी) नमस्कार करते हैं॥3॥
*** परे भूमि नहिं उठत उठाए। बर करि कृपासिंधु उर लाए॥ स्यामल गात रोम भए ठाढ़े। नव राजीव नयन जल बाढ़े॥4॥
भावार्थ:-
भरतजी पृथ्वी पर पड़े हैं, उठाए उठते नहीं। तब कृपासिंधु श्री रामजी ने उन्हें जबर्दस्ती उठाकर हृदय से लगा लिया। (उनके) साँवले शरीर पर रोएँ खड़े हो गए। नवीन कमल के समान नेत्रों में (प्रेमाश्रुओं के) जल की बाढ़ आ गई॥4॥
छंद :
***राजीव लोचन स्रवत जल तन ललित पुलकावलि बनी। अति प्रेम हृदयँ लगाइ अनुजहि मिले प्रभु त्रिभुअन धनी॥ प्रभु मिलत अनुजहि सोह मो पहिं जाति नहिं उपमा कही। जनु प्रेम अरु सिंगार तनु धरि मिले बर सुषमा लही॥1॥
भावार्थ:-
कमल के समान नेत्रों से जल बह रहा है। सुंदर शरीर में पुलकावली (अत्यंत) शोभा दे रही है। त्रिलोकी के स्वामी प्रभु श्री रामजी छोटे भाई भरतजी को अत्यंत प्रेम से हृदय से लगाकर मिले। भाई से मिलते समय प्रभु जैसे शोभित हो रहे हैं, उसकी उपमा मुझसे कही नहीं जाती। मानो प्रेम और श्रृंगार शरीर धारण करके मिले और श्रेष्ठ शोभा को प्राप्त हुए॥1॥
*** बूझत कृपानिधि कुसल भरतहि बचन बेगि न आवई॥ सुनु सिवा सो सुख बचन मन ते भिन्न जान जो पावई॥ अब कुसल कौसलनाथ आरत जानि जन दरसन दियो। बूड़त बिरह बारीस कृपानिधान मोहि कर गहि लियो॥2॥
भावार्थ:-
कृपानिधान श्री रामजी भरतजी से कुशल पूछते हैं, परंतु आनंदवश भरतजी के मुख से वचन शीघ्र नहीं निकलते। (शिवजी ने कहा-) हे पार्वती! सुनो, वह सुख (जो उस समय भरतजी को मिल रहा था) वचन और मन से परे है, उसे वही जानता है जो उसे पाता है। (भरतजी ने कहा-) हे कोसलनाथ! आपने आर्त्त (दुःखी) जानकर दास को दर्शन दिए, इससे अब कुशल है। विरह समुद्र में डूबते हुए मुझको कृपानिधान ने हाथ पकड़कर बचा लिया॥2॥
दोहा :
*** पुनि प्रभु हरषि सत्रुहन भेंटे हृदयँ लगाइ। लछिमन भरत मिले तब परम प्रेम दोउ भाइ॥6॥
भावार्थ:-

फिर प्रभु हर्षित होकर शत्रुघ्नजी को हृदय से लगाकर उनसे मिले। तब लक्ष्मणजी और भरतजी दोनों भाई परम प्रेम से मिले॥।5॥

चौपाई :

*** भरतानुज लछिमन पुनि भेंटे। दुसह बिरह संभव दुख मेटे॥ सीता चरन भरत सिरु नावा। अनुज समेत परम सुख पावा॥1॥

भावार्थ:-

फिर लक्ष्मणजी शत्रुघ्नजी से गले लगकर मिले और इस प्रकार विरह से उत्पन्न दुःसह दुःख का नाश किया। फिर भाई शत्रुघ्नजी सहित भरतजी ने सीताजी के चरणों में सिर नवाया और परम सुख प्राप्त किया॥1॥

*** प्रभु बिलोकि हरषे पुरबासी। जनित बियोग बिपति सब नासी॥ प्रेमातुर सब लोग निहारी। कौतुक कीन्ह कृपाल खरारी॥2॥

भावार्थ:-

प्रभु को देखकर अयोध्यावासी सब हर्षित हुए। वियोग से उत्पन्न सब दुःख नष्ट हो गए। सब लोगों को प्रेम विह्नल (और मिलने के लिए अत्यंत आतुर) देखकर खर के शत्रु कृपालु श्री रामजी ने एक चमत्कार किया॥2॥

*** अमित रूप प्रगटे तेहि काला। जथाजोग मिले सबहि कृपाला॥ कृपादृष्टि रघुबीर बिलोकी। किए सकल नर नारि बिसोकी॥3॥

भावार्थ:-

उसी समय कृपालु श्री रामजी असंख्य रूपों में प्रकट हो गए और सबसे (एक ही साथ) यथायोग्य मिले। श्री रघुवीर ने कृपा की दृष्टि से देखकर सब नर-नारियों को शोक से रहित कर दिया॥3॥

*** छन महिं सबहि मिले भगवाना। उमा मरम यह काहुँ न जाना॥ एहि बिधि सबहि सुखी करि रामा। आगें चले सील गुन धामा॥4॥

भावार्थ:-

भगवान् क्षण मात्र में सबसे मिल लिए। हे उमा! यह रहस्य किसी ने नहीं जाना। इस प्रकार शील और गुणों के धाम श्री रामजी सबको सुखी करके आगे बढ़े॥4॥

*** कौसल्यादि मातु सब धाई। निरखि बच्छ जनु धेनु लवाई॥5॥

भावार्थ:-

कौसल्या आदि माताएँ ऐसे दौड़ीं मानों नई ब्यायी हुई गायें अपने बछड़ों को देखकर दौड़ी हों॥5॥

छंद :

*** जनु धेनु बालक बच्छ तजि गृहँ चरन बन परबस गईं। दिन अंत पुर रुख स्रवत थन हुंकार करि धावत भईं॥ अति प्रेम प्रभु सब मातु भेटीं बचन मृदु बहु बिधि कहे। गइ बिषम बिपति बियोगभव तिन्ह हरष सुख अगनित लहे॥

भावार्थ:-
मानो नई ब्यायी हुई गायें अपने छोटे बछड़ों को घर पर छोड़ परवश होकर वन में चरने गई हों और दिन का अंत होने पर (बछड़ों से मिलने के लिए) हुँकार करके थन से दूध गिराती हुईं नगर की ओर दौड़ी हों। प्रभु ने अत्यंत प्रेम से सब माताओं से मिलकर उनसे बहुत प्रकार के कोमल वचन कहे। वियोग से उत्पन्न भयानक विपत्ति दूर हो गई और सबने (भगवान् से मिलकर और उनके वचन सुनकर) अगणित सुख और हर्ष प्राप्त किए।
दोहा :
***भेंटेउ तनय सुमित्राँ राम चरन रति जानि। रामहि मिलत कैकई हृदयँ बहुत सकुचानि॥6 क॥
भावार्थ:-
सुमित्राजी अपने पुत्र लक्ष्मणजी की श्री रामजी के चरणों में प्रीति जानकर उनसे मिलीं। श्री रामजी से मिलते समय कैकेयीजी हृदय में बहुत सकुचाईं॥6 (क)॥
*** लछिमन सब मातन्ह मिलि हरषे आसिष पाइ। कैकइ कहँ पुनि पुनि मिले मन कर छोभु न जाइ॥6 ख॥
भावार्थ:-
लक्ष्मणजी भी सब माताओं से मिलकर और आशीर्वाद पाकर हर्षित हुए। वे कैकेयीजी से बार-बार मिले, परंतु उनके मन का क्षोभ (रोष) नहीं जाता॥6 (ख)॥
चौपाई :
*** सासुन्ह सबनि मिली बैदेही । चरनन्हि लाग हरषु अति तेही॥ देहिं असीस बूझि कुसलाता। होइ अचल तुम्हार अहिवाता॥1॥
भावार्थ:-
जानकीजी सब सासुओं से मिलीं और उनके चरणों में लगकर उन्हें अत्यंत हर्ष हुआ। सासुएँ कुशल पूछकर आशीष दे रही हैं कि तुम्हारा सुहाग अचल हो॥1॥
*** सब रघुपति मुख कमल बिलोकहिं। मंगल जानि नयन जल रोकहिं॥ कनक थार आरती उतारहिं। बार बार प्रभु गात निहारहिं॥2॥
भावार्थ:-
सब माताएँ श्री रघुनाथजी का कमल सा मुखड़ा देख रही हैं। (नेत्रों से प्रेम के आँसू उमड़े आते हैं, परंतु) मंगल का समय जानकर वे आँसुओं के जल को नेत्रों में ही रोक रखती हैं। सोने के थाल से आरती उतारती हैं और बार-बार प्रभु के श्री अंगों की ओर देखती हैं॥2॥
*** नाना भाँति निछावरि करहीं। परमानंद हरष उर भरहीं॥ कौसल्या पुनि पुनि रघुबीरहि। चितवति कृपासिंधु रनधीरहि॥3॥
भावार्थ:-
अनेकों प्रकार से निछावरें करती हैं और हृदय में परमानंद तथा हर्ष भर रही हैं। कौसल्याजी बार-

बार कृपा के समुद्र और रणधीर श्री रघुवीर को देख रही हैं॥3॥
*** हृदयँ बिचारति बारहिं बारा। कवन भाँति लंकापति मारा॥ अति सुकुमार जुगल मेरे बारे। निसिचर सुभट महाबल भारे॥4॥
भावार्थ:-
वे बार-बार हृदय में विचारती हैं कि इन्होंने लंकापति रावण को कैसे मारा? मेरे ये दोनों बच्चे बड़े ही सुकुमार हैं और राक्षस तो बड़े भारी योद्धा और महान् बली थे॥4॥
दोहा :
*** लछिमन अरु सीता सहित प्रभुहि बिलोकति मातु। परमानंद मगन मन पुनि पुनि पुलकित गातु॥7॥
भावार्थ:-
लक्ष्मणजी और सीताजी सहित प्रभु श्री रामचंद्रजी को माता देख रही हैं। उनका मन परमानंद में मग्न है और शरीर बार-बार पुलकित हो रहा है॥7॥
चौपाई :
*** लंकापति कपीस नल नीला। जामवंत अंगद सुभसीला॥ हनुमदादि सब बानर बीरा। धरे मनोहर मनुज सरीरा॥1॥
भावार्थ:-
लंकापति विभीषण, वानरराज सुग्रीव, नल, नील, जाम्बवान् और अंगद तथा हनुमान्‌जी आदि सभी उत्तम स्वभाव वाले वीर वानरों ने मनुष्यों के मनोहर शरीर धारण कर लिए॥1॥
*** भरत सनेह सील ब्रत नेमा। सादर सब बरनहिं अति प्रेमा॥ देखि नगरबासिन्ह कै रीती। सकल सराहहिं प्रभु पद प्रीती॥2॥
भावार्थ:-
वे सब भरतजी के प्रेम, सुंदर, स्वभाव (त्याग के) व्रत और नियमों की अत्यंत प्रेम से आदरपूर्वक बड़ाई कर रहे हैं और नगर वासियों की (प्रेम, शील और विनय से पूर्ण) रीति देखकर वे सब प्रभु के चरणों में उनके प्रेम की सराहना कर रहे हैं॥2॥
*** पुनि रघुपति सब सखा बोलाए। मुनि पद लागहु सकल सिखाए॥ गुर बसिष्ट कुलपूज्य हमारे। इन्ह की कृपाँ दनुज रन मारे॥3॥
भावार्थ:-
फिर श्री रघुनाथजी ने सब सखाओं को बुलाया और सबको सिखाया कि मुनि के चरणों में लगो। ये गुरु वशिष्ठजी हमारे कुलभर के पूज्य हैं। इन्हीं की कृपा से रण में राक्षस मारे गए हैं॥3॥
*** ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे। भए समर सागर कहँ बेरे॥ मम हित लागि जन्म इन्ह हारे। भरतहु ते मोहि अधिक पिआरे॥4॥
भावार्थ:-

(फिर गुरुजी से कहा-) हे मुनि! सुनिए। ये सब मेरे सखा हैं। ये संग्राम रूपी समुद्र में मेरे लिए बेड़े (जहाज) के समान हुए। मेरे हित के लिए इन्होंने अपने जन्म तक हार दिए (अपने प्राणों तक को होम दिया) ये मुझे भरत से भी अधिक प्रिय हैं॥4॥

*** सुनि प्रभु बचन मगन सब भए। निमिष निमिष उपजत सुख नए।5॥

भावार्थ:-

प्रभु के वचन सुनकर सब प्रेम और आनंद में मग्न हो गए। इस प्रकार पल-पल में उन्हें नए-नए सुख उत्पन्न हो रहे हैं॥5॥

दोहा :

*** कौसल्या के चरनन्हि पुनि तिन्ह नायउ माथ। आसिष दीन्हे हरषि तुम्ह प्रिय मम जिमि रघुनाथ॥8 क॥

भावार्थ:-

फिर उन लोगों ने कौसल्याजी के चरणों में मस्तक नवाए। कौसल्याजी ने हर्षित होकर आशीषें दीं (और कहा-) तुम मुझे रघुनाथ के समान प्यारे हो।8 (क)॥

***सुमन बृष्टि नभ संकुल भवन चले सुखकंद। चढ़ी अटारिन्ह देखहिं नगर नारि नर बृंद॥8 ख॥

भावार्थ:-

आनन्दकन्द श्री रामजी अपने महल को चले, आकाश फूलों की वृष्टि से छा गया। नगर के स्त्री-पुरुषों के समूह अटारियों पर चढ़कर उनके दर्शन कर रहे हैं।8 (ख)॥

चौपाई :

*** कंचन कलस बिचित्र सँवारे। सबहिं धरे सजि निज निज द्वारे॥ बंदनवार पताका केतू। सबन्हि बनाए मंगल हेतू॥1॥

भावार्थ:-

सोने के कलशों को विचित्र रीति से (मणि-रत्नादि से) अलंकृत कर और सजाकर सब लोगों ने अपने-अपने दरवाजों पर रख लिया। सब लोगों ने मंगल के लिए बंदनवार, ध्वजा और पताकाएँ लगाईं॥1॥

*** बीथीं सकल सुगंध सिंचाई। गजमनि रचि बहु चौक पुराईं। नाना भाँति सुमंगल साजे। हरषि नगर निसान बहु बाजे।2॥

भावार्थ:-

सारी गलियाँ सुगंधित द्रवों से सिंचाई गईं। गजमुक्ताओं से रचकर बहुत सी चौकें पुराई गईं। अनेकों प्रकार के सुंदर मंगल साज सजाए गए और हर्षपूर्वक नगर में बहुत से डंके बजने लगे॥2॥

*** जहँ तहँ नारि निछावरि करहीं। देहिं असीस हरष उर भरहीं॥ कंचन थार आरतीं नाना। जुबतीं सजें करहिं सुभ गाना॥3॥ `

भावार्थ:-
स्त्रियाँ जहाँ-तहाँ निछावर कर रही हैं और हृदय में हर्षित होकर आशीर्वाद देती हैं। बहुत सी युवती (सौभाग्यवती) स्त्रियाँ सोने के थालों में अनेकों प्रकार की आरती सजाकर मंगलगान कर रही हैं॥3॥
*** करहिं आरती आरतिहर कें। रघुकुल कमल बिपिन दिनकर कें॥ पुर सोभा संपति कल्याना। निगम सेष सारदा बखाना॥4॥
भावार्थ:-
वे आर्तिहर (दुःखों को हरने वाले) और सूर्यकुल रूपी कमलवन को प्रफुल्लित करने वाले सूर्य श्री रामजी की आरती कर रही हैं। नगर की शोभा, संपत्ति और कल्याण का वेद, शेषजी और सरस्वतीजी वर्णन करते हैं-॥4॥
*** तेउ यह चरित देखि ठगि रहहीं। उमा तासु गुन नर किमि कहहीं॥5॥
भावार्थ:-
परंतु वे भी यह चरित्र देखकर ठगे से रह जाते हैं (स्तम्भित हो रहते हैं)। (शिवजी कहते हैं-) हे उमा! तब भला मनुष्य उनके गुणों को कैसे कह सकते हैं॥5॥
दोहा :
*** नारि कुमुदिनीं अवध सर रघुपति बिरह दिनेस। अस्त भएँ बिगसत भईं निरखि राम राकेस॥9 क॥
भावार्थ:-
स्त्रियाँ कुमुदनी हैं, अयोध्या सरोवर है और श्री रघुनाथजी का विरह सूर्य है (इस विरह सूर्य के ताप से वे मुरझा गई थीं)। अब उस विरह रूपी सूर्य के अस्त होने पर श्री राम रूपी पूर्णचन्द्र को निरखकर वे खिल उठीं॥9 (क)॥
*** होहिं सगुन सुभ बिबिधि बिधि बाजहिं गगन निसान। पुर नर नारि सनाथ करि भवन चले भगवान। 9 ख॥
भावार्थ:-
अनेक प्रकार के शुभ शकुन हो रहे हैं, आकाश में नगाड़े बज रहे हैं। नगर के पुरुषों और स्त्रियों को सनाथ (दर्शन द्वारा कृतार्थ) करके भगवान् श्री रामचंद्रजी महल को चले॥9 (ख)॥
चौपाई :
*** प्रभु जानी कैकई लजानी। प्रथम तासु गृह गए भवानी॥ ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा। पुनि निज भवन गवन हरि कीन्हा॥1॥
भावार्थ:-
(शिवजी कहते हैं-) हे भवानी! प्रभु ने जान लिया कि माता कैकेयी लज्जित हो गई हैं (इसलिए), वे पहले उन्हीं के महल को गए और उन्हें समझा-बुझाकर बहुत सुख दिया। फिर श्री हरि ने

अपने महल को गमन किया॥1॥

*** कृपासिंधु जब मंदिर गए। पुर नर नारि सुखी सब भए॥ गुर बसिष्ट द्विज लिए बुलाई। आजु सुघरी सुदिन समुदाई।2॥

भावार्थ:-

कृपा के समुद्र श्री रामजी जब अपने महल को गए, तब नगर के स्त्री-पुरुष सब सुखी हुए। गुरु वशिष्ठजी ने ब्राह्मणों को बुला लिया और कहा आज शुभ घड़ी, सुंदर दिन आदि सभी शुभ योग हैं॥2॥

*** सब द्विज देहु हरषि अनुसासन। रामचंद्र बैठहिं सिंघासन॥ मुनि बसिष्ट के बचन सुहाए। सुनत सकल बिप्रन्ह अति भाए॥3॥

भावार्थ:-

आप सब ब्राह्मण हर्षित होकर आज्ञा दीजिए, जिसमें श्री रामचंद्रजी सिंहासन पर विराजमान हों। वशिष्ठ मुनि के सुहावने वचन सुनते ही सब ब्राह्मणों को बहुत ही अच्छे लगे॥3॥

*** कहहिं बचन मृदु बिप्र अनेका। जग अभिराम राम अभिषेका॥ अब मुनिबर बिलंब नहिं कीजै। महाराज कहँ तिलक करीजै॥4॥

भावार्थ:-

वे सब अनेकों ब्राह्मण कोमल वचन कहने लगे कि श्री रामजी का राज्याभिषेक संपूर्ण जगत को आनंद देने वाला है। हे मुनिश्रेष्ठ! अब विलंब न कीजिए और महाराज का तिलक शीघ्र कीजिए॥4॥

दोहा :

*** तब मुनि कहेउ सुमंत्र सन सुनत चलेउ हरषाइ। रथ अनेक बहु बाजि गज तुरत सँवारे जाइ॥10 क॥

भावार्थ:-

तब मुनि ने सुमन्त्रजी से कहा, वे सुनते ही हर्षित होकर चले। उन्होंने तुरंत ही जाकर अनेकों रथ, घोड़े और हाथी सजाए,॥10 (क)॥

*** जहँ तहँ धावन पठइ पुनि मंगल द्रब्य मगाइ। हरष समेत बसिष्ट पद पुनि सिरु नायउ आइ॥10 ख॥

भावार्थ:-

और जहाँ-तहाँ (सूचना देने वाले) दूतों को भेजकर मांगलिक वस्तुएँ मँगाकर फिर हर्ष के साथ आकर वशिष्ठजी के चरणों में सिर नवाया॥10 (ख)॥

नवाह्नपारायण, आठवाँ विश्राम

राम राज्याभिषेक, वेदस्तुति, शिवस्तुति

चौपाई :

*** अवधपुरी अति रुचिर बनाई। देवन्ह सुमन बृष्टि झरि लाई॥ राम कहा सेवकन्ह बुलाई। प्रथम सखन्ह अन्हवावहु जाई॥1॥

भावार्थ:-

अवधपुरी बहुत ही सुंदर सजाई गई। देवताओं ने पुष्पों की वर्षा की झड़ी लगा दी। श्री रामचंद्रजी ने सेवकों को बुलाकर कहा कि तुम लोग जाकर पहले मेरे सखाओं को स्नान कराओ॥1॥

*** सुनत बचन जहँ तहँ जन धाए। सुग्रीवादि तुरत अन्हवाए॥ पुनि करुनानिधि भरतु हँकारे। निज कर राम जटा निरुआरे॥2॥

भावार्थ:-

भगवान् के वचन सुनते ही सेवक जहाँ-तहाँ दौड़े और तुरंत ही उन्होंने सुग्रीवादि को स्नान कराया। फिर करुणानिधान श्री रामजी ने भरतजी को बुलाया और उनकी जटाओं को अपने हाथों से सुलझाया॥2॥

*** अन्हवाए प्रभु तीनिउ भाई। भगत बछल कृपाल रघुराई॥ भरत भाग्य प्रभु कोमलताई। सेष कोटि सत सकहिं न गाई॥3॥

भावार्थ:-

तदनन्तर भक्त वत्सल कृपालु प्रभु श्री रघुनाथजी ने तीनों भाइयों को स्नान कराया। भरतजी का भाग्य और प्रभु की कोमलता का वर्णन अरबों शेषजी भी नहीं कर सकते॥3॥

*** पुनि निज जटा राम बिबराए। गुर अनुसासन मागि नहाए॥ करि मज्जन प्रभु भूषन साजे। अंग अनंग देखि सत लाजे॥4॥

भावार्थ:-

फिर श्री रामजी ने अपनी जटाएँ खोलीं और गुरुजी की आज्ञा माँगकर स्नान किया। स्नान करके प्रभु ने आभूषण धारण किए। उनके (सुशोभित) अंगों को देखकर सैकड़ों (असंख्य) कामदेव लजा गए॥4॥

दोहा :

*** सासुन्ह सादर जानकिहि मज्जन तुरत कराइ। दिब्य बसन बर भूषन अँग अँग सजे बनाइ॥11 क॥

भावार्थ:-

(इधर) सासुओं ने जानकीजी को आदर के साथ तुरंत ही स्नान कराके उनके अंग-अंग में दिव्य वस्त्र और श्रेष्ठ आभूषण भली-भाँति सजा दिए (पहना दिए)॥ 11 (क)॥

*** राम बाम दिसि सोभति रमा रूप गुन खानि। देखि मातु सब हरषीं जन्म सुफल निज जानि॥11 ख॥

भावार्थ:-

श्री राम के बायीं ओर रूप और गुणों की खान रमा (श्री जानकीजी) शोभित हो रही हैं। उन्हें देखकर सब माताएँ अपना जन्म (जीवन) सफल समझकर हर्षित हुईं॥11 (ख)॥

***सुनु खगेस तेहि अवसर ब्रह्मा सिव मुनि बृंद। चढ़ि बिमान आए सब सुर देखन सुखकंद॥11 ग॥

भावार्थ:-

(काकभुशुण्डिजी कहते हैं-) हे पक्षीराज गरुड़जी! सुनिए, उस समय ब्रह्माजी, शिवजी और मुनियों के समूह तथा विमानों पर चढ़कर सब देवता आनंदकंद भगवान् के दर्शन करने के लिए आए॥11 (ग)॥

चौपाई :

*** प्रभु बिलोकि मुनि मन अनुरागा। तुरत दिब्य सिंघासन मागा॥ रबि सम तेज सो बरनि न जाई। बैठे राम द्विजन्ह सिरु नाई॥1॥

भावार्थ:-

प्रभु को देखकर मुनि वशिष्ठजी के मन में प्रेम भर आया। उन्होंने तुरंत ही दिव्य सिंहासन मँगवाया, जिसका तेज सूर्य के समान था। उसका सौंदर्य वर्णन नहीं किया जा सकता। ब्राह्मणों को सिर नवाकर श्री रामचंद्रजी उस पर विराज गए॥1॥

*** जनकसुता समेत रघुराई। पेखि प्रहरषे मुनि समुदाई॥ बेद मंत्र तब द्विजन्ह उचारे। नभ सुर मुनि जय जयति पुकारे॥2॥

भावार्थ:-

श्री जानकीजी के सहित रघुनाथजी को देखकर मुनियों का समुदाय अत्यंत ही हर्षित हुआ। तब ब्राह्मणों ने वेदमंत्रों का उच्चारण किया। आकाश में देवता और मुनि 'जय, हो, जय हो' ऐसी पुकार करने लगे॥2॥

*** प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा। पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा॥ सुत बिलोकि हरषीं महतारी। बार बार आरती उतारी॥3॥

भावार्थ:-

(सबसे) पहले मुनि वशिष्ठजी ने तिलक किया। फिर उन्होंने सब ब्राह्मणों को (तिलक करने की) आज्ञा दी। पुत्र को राजसिंहासन पर देखकर माताएँ हर्षित हुईं और उन्होंने बारबार आरती उतारी॥3॥

*** बिप्रन्ह दान बिबिधि बिधि दीन्हे। जाचक सकल अजाचक कीन्हे॥ सिंघासन पर त्रिभुअन साईं। देखि सुरन्ह दुंदुभीं बजाईं॥4॥

भावार्थ:-
उन्होंने ब्राह्मणों को अनेकों प्रकार के दान दिए और संपूर्ण याचकों को अयाचक बना दिया (मालामाल कर दिया)। त्रिभुवन के स्वामी श्री रामचंद्रजी को (अयोध्या के) सिंहासन पर (विराजित) देखकर देवताओं ने नगाड़े बजाए॥4॥
छंद :
*** नभ दुंदुभीं बाजहिं बिपुल गंधर्ब किंनर गावहीं। नाचहिं अपछरा बृंद परमानंद सुर मुनि पावहीं॥ भरतादि अनुज बिभीषनांगद हनुमदादि समेत ते। गहें छत्र चामर ब्यजन धनु असिचर्म सक्ति बिराजते॥1॥
भावार्थ:-
आकाश में बहुत से नगाड़े बज रहे हैं। गन्धर्व और किन्नर गा रहे हैं। अप्सराओं के झुंड के झुंड नाच रहे हैं। देवता और मुनि परमानंद प्राप्त कर रहे हैं। भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्नजी, विभीषण, अंगद, हनुमान् और सुग्रीव आदि सहित क्रमशः छत्र, चँवर, पंखा, धनुष, तलवार, ढाल और शक्ति लिए हुए सुशोभित हैं॥1॥
*** श्री सहित दिनकर बंस भूषन काम बहु छबि सोहई। नव अंबुधर बर गात अंबर पीत सुर मन मोहई॥ मुकुटांगदादि बिचित्र भूषन अंग अंगन्हि प्रति सजे। अंभोज नयन बिसाल उर भुज धन्य नर निरखंति जे॥2॥
भावार्थ:-
श्री सीताजी सहित सूर्यवंश के विभूषण श्री रामजी के शरीर में अनेकों कामदेवों की छबि शोभा दे रही है। नवीन जलयुक्त मेघों के समान सुंदर श्याम शरीर पर पीताम्बर देवताओं के मन को भी मोहित कर रहा है। मुकुट, बाजूबंद आदि विचित्र आभूषण अंग-अंग में सजे हुए हैं। कमल के समान नेत्र हैं, चौड़ी छाती है और लंबी भुजाएँ हैं जो उनके दर्शन करते हैं, वे मनुष्य धन्य हैं॥2॥
दोहा :
***वह सोभा समाज सुख कहत न बनइ खगेस। बरनहिं सारद सेष श्रुति सो रस जान महेस॥12 क॥
भावार्थ:-
हे पक्षीराज गरुड़जी ! वह शोभा, वह समाज और वह सुख मुझसे कहते नहीं बनता। सरस्वतीजी, शेषजी और वेद निरंतर उसका वर्णन करते हैं, और उसका रस (आनंद) महादेवजी ही जानते हैं॥12 (क)॥
***भिन्न भिन्न अस्तुति करि गए सुर निज निज धाम। बंदी बेष बेद तब आए जहँ श्रीराम॥12 ख॥
भावार्थ:-
सब देवता अलग-अलग स्तुति करके अपने-अपने लोक को चले गए। तब भाटों का रूप धारण

करके चारों वेद वहाँ आए जहाँ श्री रामजी थे॥12 (ख)॥

***प्रभु सर्बग्य कीन्ह अति आदर कृपानिधान। लखेउ न काहूँ मरम कछु लगे करन गुन गान॥12 ग॥

भावार्थ:-

कृपानिधान सर्वज्ञ प्रभु ने (उन्हें पहचानकर) उनका बहुत ही आदर किया। इसका भेद किसी ने कुछ भी नहीं जाना। वेद गुणगान करने लगे॥12 (ग)॥

छंद :

*** जय सगुन निर्गुन रूप रूप अनूप भूप सिरोमने। दसकंधरादि प्रचंड निसिचर प्रबल खल भुज बल हने॥ अवतार नर संसार भार बिभंजि दारुन दुख दहे। जय प्रनतपाल दयाल प्रभु संजुक्त सक्ति नमामहे॥1॥

भावार्थ:-

सगुण और निर्गुण रूप! हे अनुपम रूप-लावण्ययुक्त! हे राजाओं के शिरोमणि! आपकी जय हो। आपने रावण आदि प्रचण्ड, प्रबल और दुष्ट निशाचरों को अपनी भुजाओं के बल से मार डाला। आपने मनुष्य अवतार लेकर संसार के भार को नष्ट करके अत्यंत कठोर दुःखों को भस्म कर दिया। हे दयालु! हे शरणागत की रक्षा करने वाले प्रभो! आपकी जय हो। मैं शक्ति (सीताजी) सहित शक्तिमान् आपको नमस्कार करता हूँ॥1॥

***तव बिषम माया बस सुरासुर नाग नर अग जग हरे। भव पंथ भ्रमत अमित दिवस निसि काल कर्म गुननि भरे॥ जे नाथ करि करुना बिलोकि त्रिबिधि दुख ते निर्बहे। भव खेद छेदन दच्छ हम कहुँ रच्छ राम नमामहे॥2॥

भावार्थ:-

हे हरे! आपकी दुस्तर माया के वशीभूत होने के कारण देवता, राक्षस, नाग, मनुष्य और चर, अचर सभी काल कर्म और गुणों से भरे हुए (उनके वशीभूत हुए) दिन-रात अनन्त भव (आवागमन) के मार्ग में भटक रहे हैं। हे नाथ! इनमें से जिनको आपने कृपा करके (कृपादृष्टि) से देख लिया, वे (माया जनित) तीनों प्रकार के दुःखों से छूट गए। हे जन्म-मरण के श्रम को काटने में कुशल श्री रामजी! हमारी रक्षा कीजिए। हम आपको नमस्कार करते हैं॥2॥

*** जे ग्यान मान बिमत्त तव भव हरनि भक्ति न आदरी। ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी॥ बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे। जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भव नाथ सो समरामहे॥3॥

भावार्थ:-

जिन्होंने मिथ्या ज्ञान के अभिमान में विशेष रूप से मतवाले होकर जन्म-मृत्यु (के भय) को हरने वाली आपकी भक्ति का आदर नहीं किया, हे हरि! उन्हें देव-दुर्लभ (देवताओं को भी बड़ी कठिनता से प्राप्त होने वाले, ब्रह्मा आदि के) पद को पाकर भी हम उस पद से नीचे गिरते देखते हैं

(परंतु), जो सब आशाओं को छोड़कर आप पर विश्वास करके आपके दास हो रहते हैं, वे केवल आपका नाम ही जपकर बिना ही परिश्रम भवसागर से तर जाते हैं। हे नाथ! ऐसे आपका हम स्मरण करते हैं॥3॥

*** जे चरन सिव अज पूज्य रज सुभ परसि मुनिपतिनी तरी। नख निर्गता मुनि बंदिता त्रैलोक पावनि सुरसरी॥ ध्वज कुलिस अंकुस कंज जुत बन फिरत कंटक किन लहे। पद कंज द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामहे॥4॥

भावार्थ:-

जो चरण शिवजी और ब्रह्माजी के द्वारा पूज्य हैं, तथा जिन चरणों की कल्याणमयी रज का स्पर्श पाकर (शिला बनी हुई) गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या तर गई, जिन चरणों के नख से मुनियों द्वारा वन्दित, त्रैलोक्य को पवित्र करने वाली देवनदी गंगाजी निकलीं और ध्वजा, वज्र अंकुश और कमल, इन चिह्नों से युक्त जिन चरणों में वन में फिरते समय काँटे चुभ जाने से घट्ठे पड़ गए हैं, हे मुकुन्द! हे राम! हे रमापति! हम आपके उन्हीं दोनों चरणकमलों को नित्य भजते रहते हैं॥4॥

***अब्यक्तमूलमनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने। षट कंध साखा पंच बीस अनेक पर्न सुमन घने॥ फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे। पल्लवत फूलत नवल नित संसार बिटप नमामहे॥5॥

भावार्थ:-

वेद शास्त्रों ने कहा है कि जिसका मूल अव्यक्त (प्रकृति) है, जो (प्रवाह रूप से) अनादि है, जिसके चार त्वचाएँ, छह तने, पच्चीस शाखाएँ और अनेकों पत्ते और बहुत से फूल हैं, जिसमें कड़वे और मीठे दो प्रकार के फल लगे हैं, जिस पर एक ही बेल है, जो उसी के आश्रित रहती है, जिसमें नित्य नए पत्ते और फूल निकलते रहते हैं, ऐसे संसार वृक्ष स्वरूप (विश्व रूप में प्रकट) आपको हम नमस्कार करते हैं॥5॥

*** जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभवगम्य मनपर ध्यावहीं। ते कहहुँ जानहुँ नाथ हम तव सगुन जस नित गावहीं॥ करुनायतन प्रभु सदगुनाकर देव यह बर मागहीं। मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं॥6॥

भावार्थ:-

ब्रह्म अजन्मा है, अद्वैत है, केवल अनुभव से ही जाना जाता है और मन से परे है- (जो इस प्रकार कहकर उस) ब्रह्म का ध्यान करते हैं, वे ऐसा कहा करें और जाना करें, किंतु हे नाथ! हम तो नित्य आपका सगुण यश ही गाते हैं। हे करुणा के धाम प्रभो! हे सद्गुणों की खान! हे देव! हम यह वर माँगते हैं कि मन, वचन और कर्म से विकारों को त्यागकर आपके चरणों में ही प्रेम करें॥6॥

दोहा :

*** सब के देखत बेदन्ह बिनती कीन्हि उदार। अंतर्धान भए पुनि गए ब्रह्म आगार॥13 क॥
भावार्थ:-
वेदों ने सबके देखते यह श्रेष्ठ विनती की। फिर वे अंतर्धान हो गए और ब्रह्मलोक को चले गए॥13 (क)॥
*** बैनतेय सुनु संभु तब आए जहँ रघुबीर। बिनय करत गदगद गिरा पूरित पुलक सरीर॥13 ख॥
भावार्थ:-
काकभुशुण्डिजी कहते हैं- हे गरुड़जी ! सुनिए, तब शिवजी वहाँ आए जहाँ श्री रघुवीर थे और गद्गद् वाणी से स्तुति करने लगे। उनका शरीर पुलकावली से पूर्ण हो गया॥13 (ख)॥
छंद :
*** जय राम रमारमनं समनं। भवताप भयाकुल पाहि जनं॥ अवधेस सुरेस रमेस बिभो। सरनागत मागत पाहि प्रभो॥1॥
भावार्थ:-
हे राम! हे रमारमण (लक्ष्मीकांत)! हे जन्म-मरण के संताप का नाश करने वाले! आपकी जय हो, आवागमन के भय से व्याकुल इस सेवक की रक्षा कीजिए। हे अवधपति! हे देवताओं के स्वामी! हे रमापति! हे विभो! मैं शरणागत आपसे यही माँगता हूँ कि हे प्रभो! मेरी रक्षा कीजिए॥1॥
*** दससीस बिनासन बीस भुजा। कृत दूरि महा महि भूरि रुजा॥ रजनीचर बृंद पतंग रहे। सर पावक तेज प्रचंड दहे॥2॥
भावार्थ:-
हे दस सिर और बीस भुजाओं वाले रावण का विनाश करके पृथ्वी के सब महान् रोगों (कष्टों) को दूर करने वाले श्री रामजी! राक्षस समूह रूपी जो पतंगे थे, वे सब आपके बाण रूपी अग्नि के प्रचण्ड तेज से भस्म हो गए॥2॥
*** महि मंडल मंडन चारुतरं। धृत सायक चाप निषंग बरं। मद मोह महा ममता रजनी। तम पुंज दिवाकर तेज अनी॥3॥
भावार्थ:-
आप पृथ्वी मंडल के अत्यंत सुंदर आभूषण हैं, आप श्रेष्ठ बाण, धनुष और तरकस धारण किए हुए हैं। महान् मद, मोह और ममता रूपी रात्रि के अंधकार समूह के नाश करने के लिए आप सूर्य के तेजोमय किरण समूह हैं॥3॥
*** मनजात किरात निपात किए। मृग लोग कुभोग सरेन हिए॥ हति नाथ अनाथनि पाहि हरे। बिषया बन पावँर भूलि परे॥4॥
भावार्थ:-
कामदेव रूपी भील ने मनुष्य रूपी हिरनों के हृदय में कुभोग रूपी बाण मारकर उन्हें गिरा दिया है। हे नाथ! हे (पाप-ताप का हरण करने वाले) हरे ! उसे मारकर विषय रूपी वन में भूल पड़े हुए

इन पामर अनाथ जीवों की रक्षा कीजिए॥4॥
***बहु रोग बियोगन्हि लोग हए। भवदंघ्रि निरादर के फल ए॥ भव सिंधु अगाध परे नर ते। पद पंकज प्रेम न जे करते॥5॥
भावार्थ:-
लोग बहुत से रोगों और वियोगों (दुःखों) से मारे हुए हैं। ये सब आपके चरणों के निरादर के फल हैं। जो मनुष्य आपके चरणकमलों में प्रेम नहीं करते, वे अथाह भवसागर में पड़े हैं॥5॥
*** अति दीन मलीन दुखी नितहीं। जिन्ह कें पद पंकज प्रीति नहीं॥ अवलंब भवंत कथा जिन्ह कें। प्रिय संत अनंत सदा तिन्ह कें॥6॥
भावार्थ:-
जिन्हें आपके चरणकमलों में प्रीति नहीं है वे नित्य ही अत्यंत दीन, मलिन (उदास) और दुःखी रहते हैं और जिन्हें आपकी लीला कथा का आधार है, उनको संत और भगवान् सदा प्रिय लगने लगते हैं॥6॥
*** नहिं राग न लोभ न मान सदा। तिन्ह कें सम बैभव वा बिपदा॥ एहि ते तव सेवक होत मुदा। मुनि त्यागत जोग भरोस सदा॥7॥
भावार्थ:-
उनमें न राग (आसक्ति) है, न लोभ, न मान है, न मद। उनको संपत्ति सुख और विपत्ति (दुःख) समान है। इसी से मुनि लोग योग (साधन) का भरोसा सदा के लिए त्याग देते हैं और प्रसन्नता के साथ आपके सेवक बन जाते हैं॥7॥
***करि प्रेम निरंतर नेम लिएँ। पद पंकज सेवत सुद्ध हिएँ॥ सम मानि निरादर आदरही। सब संतु सुखी बिचरंति मही॥8॥
भावार्थ:-
वे प्रेमपूर्वक नियम लेकर निरंतर शुद्ध हृदय से आपके चरणकमलों की सेवा करते रहते हैं और निरादर और आदर को समान मानकर वे सब संत सुखी होकर पृथ्वी पर विचरते हैं॥8॥
*** मुनि मानस पंकज भृंग भजे। रघुबीर महा रनधीर अजे॥ तव नाम जपामि नमामि हरी। भव रोग महागद मान अरी॥9॥
भावार्थ:-
हे मुनियों के मन रूपी कमल के भ्रमर! हे महान् रणधीर एवं अजेय श्री रघुवीर! मैं आपको भजता हूँ (आपकी शरण ग्रहण करता हूँ) हे हरि! आपका नाम जपता हूँ और आपको नमस्कार करता हूँ। आप जन्म-मरण रूपी रोग की महान् औषध और अभिमान के शत्रु हैं॥9॥
*** गुन सील कृपा परमायतनं। प्रनमामि निरंतर श्रीरमनं॥ रघुनंद निकंदय द्वंद्वघनं। महिपाल बिलोकय दीन जनं॥10॥
भावार्थ:-

आप गुण, शील और कृपा के परम स्थान हैं। आप लक्ष्मीपति हैं, मैं आपको निरंतर प्रणाम करता हूँ। हे रघुनन्दन (आप जन्म-मरण, सुख-दुःख, राग-द्वेषादि) द्वंद्व समूहों का नाश कीजिए। हे पृथ्वी का पालन करने वाले राजन्। इस दीन जन की ओर भी दृष्टि डालिए॥10॥

दोहा :

***बार बार बर मागउँ हरषि देहु श्रीरंग। पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग॥14 क॥

भावार्थ:-

मैं आपसे बार-बार यही वरदान माँगता हूँ कि मुझे आपके चरणकमलों की अचल भक्ति और आपके भक्तों का सत्संग सदा प्राप्त हो। हे लक्ष्मीपते! हर्षित होकर मुझे यही दीजिए॥

*** बरनि उमापति राम गुन हरषि गए कैलास। तब प्रभु कपिन्ह दिवाए सब बिधि सुखप्रद बास॥14 ख॥

भावार्थ:-

श्री रामचंद्रजी के गुणों का वर्णन करके उमापति महादेवजी हर्षित होकर कैलास को चले गए। तब प्रभु ने वानरों को सब प्रकार से सुख देने वाले डेरे दिलवाए॥14 (ख)॥

चौपाई :

*** सुनु खगपति यह कथा पावनी। त्रिबिध ताप भव भय दावनी॥ महाराज कर सुभ अभिषेका। सुनत लहहिं नर बिरति बिबेका॥1॥

भावार्थ:-

हे गरुड़जी ! सुनिए यह कथा (सबको) पवित्र करने वाली है, (दैहिक, दैविक, भौतिक) तीनों प्रकार के तापों का और जन्म-मृत्यु के भय का नाश करने वाली है। महाराज श्री रामचंद्रजी के कल्याणमय राज्याभिषेक का चरित्र (निष्कामभाव से) सुनकर मनुष्य वैराग्य और ज्ञान प्राप्त करते हैं॥1॥

*** जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं। सुख संपति नाना बिधि पावहिं॥ सुर दुर्लभ सुख करि जग माहीं। अंतकाल रघुपति पुर जाहीं॥2॥

भावार्थ:-

और जो मनुष्य सकामभाव से सुनते और जो गाते हैं, वे अनेकों प्रकार के सुख और संपत्ति पाते हैं। वे जगत् में देवदुर्लभ सुखों को भोगकर अंतकाल में श्री रघुनाथजी के परमधाम को जाते हैं॥2॥

*** सुनहिं बिमुक्त बिरत अरु बिषई। लहहिं भगति गति संपति नई॥ खगपति राम कथा मैं बरनी। स्वमति बिलास त्रास दुख हरनी॥3॥

भावार्थ:-

इसे जो जीवन्मुक्त, विरक्त और विषयी सुनते हैं, वे (क्रमशः) भक्ति, मुक्ति और नवीन संपत्ति (नित्य नए भोग) पाते हैं। हे पक्षीराज गरुड़जी! मैंने अपनी बुद्धि की पहुँच के अनुसार रामकथा

वर्णन की है, जो (जन्म-मरण) भय और दुःख हरने वाली है॥3॥

*** बिरति बिबेक भगति दृढ़ करनी। मोह नदी कहँ सुंदर तरनी॥ नित नव मंगल कौसलपुरी। हरषित रहहिं लोग सब कुरी॥4॥

भावार्थ:-

यह वैराग्य, विवेक और भक्ति को दृढ़ करने वाली है तथा मोह रूपी नदी के (पार करने) के लिए सुंदर नाव है। अवधपुरी में नित नए मंगलोत्सव होते हैं। सभी वर्गों के लोग हर्षित रहते हैं॥4॥

***नित नइ प्रीति राम पद पंकज। सब कें जिन्हहि नमत सिव मुनि अज॥ मंगल बहु प्रकार पहिराए। द्विजन्ह दान नाना बिधि पाए॥5॥

भावार्थ:-

श्री रामजी के चरणकमलों में- जिन्हें श्री शिवजी, मुनिगण और ब्रह्माजी भी नमस्कार करते हैं, सबकी नित्य नवीन प्रीति है। भिक्षुकों को बहुत प्रकार के वस्त्राभूषण पहनाए गए और ब्राह्मणों ने नाना प्रकार के दान पाए॥5॥ ***अगला पेज...***